© 2018 IJSRSET | Volume 4 | Issue 6 | Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099
Themed Section : Engineering and Technology

भारतीय दर्शन में कर्म सिद्धांत

प्रतिमा कुमारी
पूर्व शोध–छात्रा,
संकाय सामाजिक विज्ञान,
मगध विश्वविद्यालय, बोधगया, बिहार, भारत।

''युज् समाधो'' धातु से समाधि अर्थ में योग होता है। यह योग जीव ईश्वर का मिलन भी कहलाता है। यह तभी संभव है जब जीव समाधि में ईश्वर लीन हो। योग में 4 पाद कहे गए हैं। समाधि पाद, साधना पाद, विभूति पाद और कैवल्यपाद।

इनमें साधना पाद में साधक ईश्वर को प्राप्त करता है। समाधि के द्वारा साधक ईश्वर में लीन होता है। विभूतिपाद के द्वारा ईश्वर की अनुभूति साधक करता है। कैवल्यपाद में केवल और केवल ब्रह्म की सत्ता रहती है अर्थात् जीवन और मरण के बंधन से सदा–सदा के लिए मुक्त हो जाता है। तथा दुःखत्रय से अव्याप्त रहता है।

भगवत गीता में कर्मयोग अपने आप में विलक्षण योग है। कर्म ईश्वर के द्वारा, कर्म साधक के द्वारा तथा कर इंद्रियों के द्वारा भिन्न–भिन्न है। कर्म का अर्थ करना होता है। कर्म को भगवत गीता में कई नामों से कहा गया है। कर्म का अर्थ कामना भी है। भगवत गीता में कहा गया है –

''युज् समाधो'' धातु से समाधि अर्थ में योग होता है। यह योग जीव ईश्वर का मिलन भी कहलाता है। यह तभी संभव है जब जीव समाधि में ईश्वर लीन हो। योग में 4 पाद कहे गए हैं। समाधि पाद, साधना पाद, विभूति पाद और कैवल्यपाद।

इनमें साधना पाद में साधक ईश्वर को प्राप्त करता है। समाधि के द्वारा साधक ईश्वर में लीन होता है। विभूतिपाद के द्वारा ईश्वर की अनुभूति साधक करता है। कैवल्यपाद में केवल और केवल ब्रह्म की सत्ता रहती है अर्थात् जीवन और मरण के बंधन से सदा–सदा के लिए मुक्त हो जाता है। तथा दुःखत्रय से अव्याप्त रहता है।

भगवत गीता में कर्मयोग अपने आप में विलक्षण योग है। कर्म ईश्वर के द्वारा, कर्म साधक के द्वारा तथा कर इंद्रियों के द्वारा भिन्न–भिन्न है। कर्म का अर्थ करना होता है। कर्म को भगवत गीता में कई नामों से कहा गया है। कर्म का अर्थ कामना भी है। भगवत गीता में कहा गया है –

''नियतं कुरू कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः।
शरीरयात्रपि च ते न प्रसिद्धयेदकर्मणः।।''

जीव अपनी इंद्रियों, अपने मन तथा बुद्धि की प्रेरणा से जो करता है वह कर्म कहलाता है। यह कर्म सांसारिक जीवों के लिए है, जो ईश्वर की कामना करते हैं। वह अपने 11 इंद्रियों, 5 विषय भोग से दूर रहकर केवल ईश्वर की प्राप्ति की कामना करते हैं। यह कर्मयोग गीता के अनुसार है।

मन, बुद्धि तथा इंद्रियों के अनुसार किया जाने वाला कर्म केवल सांसारिक सुखों में रत रहने वाला करता है। यह तीन दुखों से निवृत्त करवाने में समर्थ नहीं है। यह भोग विलास में रूप, रस, गंध इत्यादि में वशीभूत रहता है किंतु जो जीव परमात्मा बुद्धि से समस्त कर्मों को करते हुए अपने आप को अकर्ता जानता है तथा परमेश्वर की प्रेरणा मानता है तथा प्रत्येक कर्म में जीव तथा ईश्वर में कोई भेद नहीं समझता है, वही निष्काम भाव से कर्म करने वाला साधक ईश्वर में लीन होता है। शरीर के 9 छिद्रों से 11 इंद्रियों, 5 विषयों से जो वशीभूत होता है वह परमार्थिक कर्म से दूर होकर संसार के कर्म बंधन में पड़कर संसार चक्र में घूमता रहता है और अपने किए गए कर्मों के अनुसार विभिन्न योनियों में भटककर परम ब्रह्म आनंद से हमेशा दूर रहता है।

परमार्थिक कर्म के लिए आँख के 2 छिद्र, नासिका के 2 छिद्र, मुखे का एक छिद्र, कर्ण के 2 छिद्र, लिंग का एक छिद्र, प्रभु का एक छिद्र, ये 9 अलग–अलग नामों से प्रसिद्ध होने के कारण जीवों को रूप, रस, गंध, स्पर्श, शब्दादि का इंद्रियों के द्वारा भोग में प्रेरित करती है। भक्त मनुष्य सागर की तरह विशाल कामना में पड़ता है। इसका कभी अंत नहीं होता है। ऐसे सांसारिक मनुष्य हमेशा मैं और मेरा इस तरह से अहंकार में ईश्वर प्रेरित प्रकृति को छोड़कर तमोगुणी तथा रजोगुणी बनकर संसार की मिथ्या सुख को शाश्वत समझता हुआ स्थूल शरीर को विविध प्रकार के दुखों में डालता है। इसीलिए ईश्वर के बताए गए प्रकृति मार्ग को चयन करके अष्टांग यम नियम इत्यादि योगों के द्वारा यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि के द्वारा सांसारिक इच्छाओं से दूर होकर भगवत बुद्धि से समाधि में प्रविष्ट होकर ईश्वर द्वारा बतलाए गए कर्मयोग को सिद्ध करने से साधक संसार चक्र से, अविद्या से, माया से, स्थूल शरीर से, लिंग शरीर से, दुःखत्रय से मुक्त होकर सूक्ष्म शरीर में आनन्दानुभूति करते हुए अपने अपने पुण्यकर्मों के द्वारा कर्मयोग की असली सिद्धि प्राप्त कर लेता है। अब यहां प्रश्न यह उठता है कि भगवत गीता में अर्जुन को भगवान ने युद्ध करने के लिए प्रेरित किया –

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः।
लोकसंग्रहमेवापि सम्पश्यन्कतुमहीसि।।

यह किस प्रकार का कर्मयोग है तो उसका उत्तर इस प्रकार से देते हैं कि यह जगत मिथ्या है, इंद्रियों को वश में करके परमात्म बुद्धि से शास्त्र के द्वारा बताए गए कर्म को करना ही कर्मयोग है। क्योंकि संपूर्ण संसार के कारण श्रीधर रूप महाविष्णु प्रकृति है और प्रकृति का पालन करना शास्त्र धर्म है और शास्त्र धर्म के द्वारा किया गया कर्म कर्मयोग कहलाता है। अन्न का खाना–पीना, वायु का ग्रहण करना, किसी भी क्रिया क्रिया को करना कर्म कहलाता है।

यही कर्म जब बुद्धि से होता है तो वह कर्मयोग कहलाता है और निष्काम कर्मयोगी पुण्य का भागी बनता है। किंतु विविध क्रियाओं से रक्त रहने वाला भगवत बुद्धि से रहित होने के कारण कर्म करते हुए भी कर्मयोग से दूर रहता है। जिसके कारण वह सकामी पुरुष कर्मयोगी नहीं कहला पाता है। जिसके कारण किए गए कर्मों से सिद्धियां प्राप्त नहीं होती है और ना ही भगवत की प्राप्ति के लिए पुण्य प्राप्त हो पाता है। इसलिए अर्जुन को उपदेश माध्यम से भगवान कर्मयोग को संक्षेप में बताते हुए कहते हैं कि जो कर्मयोगी निष्कामी अनासक्त भाव से अपने एकादश इंद्रियों, पंच तन्मात्राओं, पंचमहाभूतों इत्यादि से आसक्ति को त्याग कर, इंद्रियों को वश में कर, बुद्धि को आत्मा में स्थित कर स्थूल प्रपंच से सूक्ष्म प्रपंच में प्रविष्ट होकर आत्मा से, आत्मा को, आत्मा के लिए आत्म साक्षात्कार करना चाहिए। जिससे जीव ईश्वर में लीन हो सके।

सभी शास्त्रों का मुख्य उद्देश्य ब्रह्म प्राप्ति ही है। अतः जब समस्त संदेहों का निराकरण हो जाता है, सांसारिक सुखों से भक्ति अनासक्त हो जाता है एवं मिथ्या संसार को जानकर संसार से विरक्त हो जाता है और तदर्थ में ईश्वर अर्थ में निर्गुण ब्रह्म में चेतना को स्थापित करता है। यह अनासक्त कर्मयोगी की उपनिषदों के द्वारा, वेदांत के द्वारा, वेदों के द्वारा तथा शास्त्रों के द्वारा बताए गए कर्म का परिचारक है।

निष्कर्ष– रूप से यही कहूंगी कि कर्म का अर्थ केवल जीव ईश्वर में अभेद बुद्धि का ज्ञान ही करना है। यही सांख्य शास्त्र में प्रकृति से लेकर इस विराट पुरुष का ज्ञान करना ही कर्मयोग कहलाता है और वह कर्मयोगी सांसारिक सत्ता से उठकर पारमार्थिक सत्ता में विलीन हो जाता है। यह विविध दर्शनों के अनुसार कर्म सिद्धांत अथवा कर्मयोग बतलाया गया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. श्रीमद्भगवद्गीता कृष्ण कृपामूर्ति
2. श्रीमद्भगवद्गीता गीता प्रेस, गोरखपुर
3. सांख्यकारिका ईश्वर कृष्ण
4. वेदान्तसार सदानंद
5. श्रीमद्भगवद्गीता तत्व विवेचना श्री जयदयाल जी
6. गीता रामानुजभाष्य
7. गीता चिंतन
8. गीता साधक संजीवन